॥ श्रीः ॥

विद्याभवन संस्कृतग्रन्थमाला

५७

यास्कप्रणीतं

निरुक्तम्

(प्रथम-द्वितीयाध्यायः)

सम्पादकः

डॉ० उमाशङ्करशर्मा 'ऋषिः'

साहित्याचार्य, एम० ए०, डी० लिट्०

रीडर, संस्कृत-विभाग, पटना विश्वविद्यालय (पटना)

चौखम्बा विद्याभवन

वाराणसी २२१००१

भूमिका

प्रथम परिच्छेद

भारतीय वाङ्मय और वैदिक साहित्य

[वेद, संसार का प्रथम साहित्य—उनकी महत्ता—विभाजन—संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्—संहिताओं का संक्षिप्त वर्णन—उनसे सम्बद्ध ब्राह्मणादि की गणना—वेदाङ्ग—शिक्षा-कल्प-व्याकरण-छन्द-ज्योतिष-निरुक्त—अन्य वेदाङ्गों से भिन्नता।]

किसी देश की संस्कृति का पूरा ज्ञान हम उसके साहित्य से ही कर सकते हैं। जिस देश का साहित्य जितना प्रौढ़, गम्भीर और विस्तृत होता है उसकी संस्कृति भी उतनी ही उच्च मानी जाती है। साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है अर्थात् साहित्य द्वारा हम किसी जाति की सभ्यता, संस्कृति, सम्पत्ति, उदारता आदि का सम्यक् ज्ञान पा सकते हैं। भारतवर्ष की जो प्रतिष्ठा आज विश्व में है अधिकांशतः वह उसके प्राचीन साहित्य पर ही अवलम्बित है। प्रायः सबों ने यह स्पष्ट रूप से स्वीकार कर लिया है कि संसार का सर्वप्रथम साहित्य भारत में ही वेदों के रूप में अवतीर्ण हुआ।[1]

वेदों पर भारतवर्ष को गौरव है। ऋषियों ने उनकी प्रतिष्ठा अक्षुण्ण रखने के लिए सैकड़ों वर्ष तक उन्हें मौखिक रूप में रखा, प्रत्येक कर्म में उनका पाठ अनिवार्य हो गया तथा 'स्वाध्यायोऽध्येतव्यः' का स्वरोद्घोष भी किया गया। पीछे का समस्त भारतीय वाङ्मय किसी-न-किसी रूप में वैदिक-साहित्य का ऋणी है। धर्म, दर्शन, विज्ञान आदि विभिन्न विषयों की उत्पत्ति के लिए हम वैदिक-साहित्य का ही आलोडन करते हैं। वेदों का अर्थ ही है ज्ञान का समूह ($\sqrt{}$ विद् = ज्ञान)। आज वेदों का अध्ययन विद्वान् लोग न केवल धर्म-कर्म आदि के ज्ञान के लिए करते हैं प्रत्युत उनके आधार पर प्राचीन-सभ्यता, आर्यों की मूल भाषा, मानव का इतिहास आदि विषयों का भी पता लगाते हैं।

यद्यपि वेदों से 'मन्त्रब्राह्मणात्मकः शब्दराशिर्वेदः' (आप० परि० ३१) के अनुसार केवल मन्त्रभाग और ब्राह्मण-भाग का ही ग्रहण प्राचीन आचार्यों ने किया है किन्तु उनका यह लक्षण केवल कर्मकाण्ड तक ही सीमित था, अतएव पाश्चात्य

---

१. मोहन-जो-दरो की अपठित शिलालिपि (सिन्ध, ४५०० ई० पू०) तथा बोघाज-कोई की हित्ताइत शिलालिपि (तुर्की, १४०० ई० पू०) को लोग वेदों से पूर्व मानते हैं। वेदों का काल—१३०० ई० पू० (मैक्समूलर), २००० ई० पू० (विन्तरनित्स), ४५०० ई० पू० (तिलक तथा जैकोबी) और २५,००० ई० पू० (अविनाश चन्द्र दास) तक मानते हैं।

गवेषकों ने भाषा के आधार पर वैदिक और लौकिक संस्कृत का भेद देखकर वैदिक भाषा में लिखे गये समस्त साहित्य को 'वैदिक' नाम से अभिहित किया है। इस प्रकार वे वैदिक-साहित्य को चार खण्डों में (भाषा के अनुसार कालों में) बाँटते हैं—संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद्। संहिता-भाग में मन्त्रों का संग्रहमात्र है और ये सबसे अधिक प्राचीन हैं। ब्राह्मण भाग मन्त्रों का याज्ञिक उपयोग बतलाना है; यह अधिकांशतः गद्य में है। आरण्यकों और उपनिषदों में दार्शनिक भावना उद्भूत हुई है, इनमें ऋषियों के ईश्वर, संसार और जीव-सम्बन्धी आध्यात्मिक विचारों का गद्य-पद्यात्मक वर्णन है।

संहिता-भाग के भी चार खण्ड हैं—ऋक् यजुः, साम और अथर्व जिनमें प्रत्येक से सम्बद्ध ब्राह्मण-आरण्यक-उपनिषद् अलग-अलग हैं। उस समय तक लेखन-कला का आविष्कार न होने के कारण इन्हें कण्ठस्थ ही रखा गया और विभिन्न कुलों में भिन्न-भिन्न रूप से पाठ होने के कारण इनकी कई शाखायें हो गईं। फिर भी प्रत्येक शाखा के अपने-अपने ब्राह्मणादि निश्चित थे। कालान्तर में बहुत-सी शाखायें लुप्त हो गईं। पतञ्जलि ने ऋग्वेद की २१, सामदेव की १०००, यजुर्वेद की १०१ और अथर्ववेद की ९ शाखाओं का उल्लेख किया है।[1] इनमें प्रत्येक शाखा स्वतन्त्र रूप से वेद है।

ऋग्वेद में ऋचाओं का संग्रह है तथा समस्त वैदिक साहित्य में यह सबसे बड़ा है। इसकी केवल एक शाकल-शाखा ही इस समय उपलब्ध है। अन्य सभी वेदों में इसके मन्त्र संगृहीत हैं। ऋग्वेद के विभाजन की दो प्रणाली हैं—अष्टक-अध्याय-वर्ग तथा मण्डल-सूक्त-अनुवाक। तदनुसार यह आठ अष्टकों या दस मण्डलों में विभक्त है। पिछला विभाजन ऐतिहासिक है, अतएव सभी आधुनिक विद्वान् ऋग्वेद के उद्धरण देते समय इसी प्रणाली का आश्रय लेते हैं। ऋग्वेद के प्रथम तथा दशम मण्डल अर्वाचीन हैं जिसे भाषा, देवता आदि के आधार पर सिद्ध किया जाता है। केवल ७५ मन्त्रों को छोड़कर सामवेद-संहिता के सभी मन्त्र ऋग्वेद से लिये गये हैं जिनमें अधिकांश नवम-मण्डल (सोमविषयक) के हैं। सामवेद के पूर्वार्चिक और उत्तरार्चिक दो भाग हैं, जिनमें सभी मन्त्र संगीत के योग्य हैं। साम-गान में सात स्वरों का उपयोग होता है। यजुर्वेद के दो भेद हैं—शुक्ल एवं कृष्ण। शुक्ल-यजुर्वेद में केवल मन्त्रों का संग्रह है, विनियोग-वाक्यों का नहीं। इसकी संहिता वाजसनेयी-संहिता कहलाती है (४० अध्याय) जिसकी दो प्रधान शाखायें—माध्यन्दिन (उत्तर भारत) और काण्व (दक्षिण) हैं। कृष्ण-यजुर्वेद में मन्त्रों के साथ-साथ विनियोग-वाक्य भी हैं। इसकी चार शाखायें प्राप्त हैं—तैत्तिरीय (अष्टक-प्रश्न-अनुवाक में विभक्त), मैत्रायणी, काठक तथा कठ-कापिष्ठल संहितायें। दोनों यजुर्वेद प्रायः गद्य में हैं जो वैदिक साहित्य का प्रथम गद्य है। अथर्ववेद में अभिचार

१. महाभाष्य—पृष्ठ ७१ (बम्बई)—एकशतमध्वर्युशाखाः, सहस्रवर्त्मा सामवेदः, एकविंशतिधा बाह्वृच्यं, नवधाऽऽथर्वणो वेदः।